यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' के उपन्यास और उनका सामाजिक चित्रण

सोमवीर

हिन्दी विभाग

महेन्द्रगढ, राजस्थान

Published in IJIRMPS (E-ISSN: 2349-7300), Volume 10, Issue 3, (May-June 2022)

License: Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0 International License

सार

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' ने उपन्यासकार के रूप में जो उपलब्धियाँ प्राप्त की वह निश्चय ही परवर्ती लेखकों के लिए सदैव प्रेरणा का स्त्रोत रहेगी। 'चन्द्र' आज हिन्दी के प्रथम श्रेणी के रचनाकारों में अपना स्थान बना चुके हे। इनके उपन्यासों में उनकी सामाजिक संलग्नता का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है :

(1) सन्यासी और सुन्दरी (1954)

सन् 1954 में प्रकाशित चन्द्र का यह प्रथम उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास में धर्म, काम और सन्यास का त्रिकोण प्रस्तुत किया गयाहै। इस उपन्यास में हमें मानव जीवन के सात्विक तथा राजस आदर्शो के संघर्ष का श्रेष्ठ चित्रण मिलता है। रूप, सौन्दर्य और वैावके प्रचलित परिवेश में परिवर्तन की आकांक्षा सामाजिक चेतना का अंकुरण प्रल्फरित करती है और राहुल कह उठता है "मैं सौन्दर्य के दम्भ को सहन नही कर सकता। मैं वैभव को वहन नही कर सकता। मैं केवल तुम्हें अपने सृजन की प्रेरणा के रूप में देखता हूँ।" वही पर वासवदता के स्वर में धन, न्याय के प्रति वितृष्णा तथा नारी के विद्रोह की अनुगूंज सुनाईदेती है। "धन से नारी की अभिलाषाओ की तृप्ति नही होती। आप लोग नारी को प्रमोद का साधन मात्र समझते है, उसकी भावनाओ का उपहास उडतो है, उसकी वाणी को व्यर्थ का प्रलाप समझते है और जब नारी आप लोगो की सत्यता को जानकर विरोध करती है तो आप उसे किसी कुचक्र में फंसाकर दण्डित कराने का प्रयास करते है। यही तो है आपका न्याय"? प्यार और वासना चिरन्तन समस्या पर आधारित यह उपन्यास हिन्दी मे 'चित्रलेखा' टाईप के उपन्यासों कीश्रेणी में आकर राष्ट्रभाषा की श्री वृद्वि करता है।

(2) दीया जला : दीया बुझा (1954)

इस उपन्यास में लेखक ने हसोन्मुखी सामंतशाही का नग्न यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। यह एक यथार्थवादी उपन्यास है जिसमें सामंती शोषण और विलास व्याभिचार का मार्मिक चित्रण हुआ है। नत्थू के शब्दों में सामंती परिवेश के विरूद्व सामाजिक चेतना झलकती है "और यह ठाकुर? बाप रे बाप! पूरा राक्षस है। कहता है कि ऐश करना हमारी आन है, किसानों से बेगार कराना हमारा धर्म है।" बाली पैशाचिकता का वर्णन करती है "ये दांत के निशान देखो ये काटने के चिह्न।" इसी उपन्यास में ऊम्बला गांव के पंचों को रामायण और गीता सौगंध खिलाकर पूछता है "यदि राजा रैयत के साथ अनीति का काम करे तो क्या रैयत को उस अनीति को सह लेना चाहिए?" यह कथन सामाजिक चेतना का संकेत है।

(3) मिट्टी का कलंक (1956)

इस उपन्यास में जिस वातावरण को और जिस विषय को लेखक ने चित्रित किया है वह है राजस्थान की जनजागृति के साथ-साथ ह्रासोन्मुखी सामंती व्यवस्था का टूटता हुआ ढाँचा। जमीदारों और ठाकुरों के किसानों पर अत्याचार और नारी के प्रति एक भोग्य वस्तु का सा अमानवीय सम्बन्ध इस उपन्यास के दो मुख्य मूलाधार है। लाल कुवर की घोषणाए सुनकर "सारे किसानों में हलचल मच गई। सभी लोगो ने मन ही मन साहूकारो को गालियां दी और उनके सर्वनाश की कामना की। चौधरी ने बोलेने के लिये जरा जबान खोलनी चाही पर उसे गांव के कारिन्दों ने डाट पिला दी। चौधरी का विद्रोह लठैतों के देखकर शांत हो गया।" चौधरी के मन में विद्रोह की चेतना का भाव ही सामाजिक संलग्नता से जुडाव को प्रदर्शित करता है। इसी प्रकार मास्टर के स्वर में आक्षेप "आदमी की क्रूररता एंव पशुता का नंगा रूप कदाचित इन्ही सत्ताधारियों के रावले में पाया जाता है।" झींटिया सामन्तो के विरूद्ध जनजागरण पैदा करता है। इस उपन्यास की कथावस्तु में इतिहास, कल्पना और नारी मनोविज्ञान का मणिकांचन संयोग हुआ है।

(4) नया इन्सान (1956)

यह एक समस्या प्रधान सामाजिक उपन्यास है। रूप सौन्दर्य ही नारी जीवन का सर्वस्व तथा रूप विकृति ही उसके जीवन में अभिशाप है। समाज की इस विकृत संकल्पना को इस उपन्यास में बडी सक्षमता के साथ उभारा गया है। उपन्यास में छात्र वर्ग व युवा वर्ग की समस्याओं के साथ-साथ असहाय नारी के परिवेश की गाथा है।

उपन्यास के नायक अमृतक ने पहला खुला पत्र देश के समाज सुधारको के नाम पर लिखा "समाज के उद्वार व उसमें चेतना लाने का जो ठेका आपने ले रखा है, वह स्तुत्य है।" कुछ ये नयी रोशनी के युवक आपकी ढ़ोंगपूर्ण सुधारवादी वार्ता से तंग आ गए है। वे क्रांतिकारी कदम उठाने लग गए है। नौजवानों के नाम खुले पत्र में उपन्यासकार अमृत के माध्यम से बोलता है "तुम्हें समाज के ढाँचे को बदलना है। तुम्हें मानवता के लिए धर्म के थोथे रूप को मिटाना है। तुम्हें देश के घातक सफेद पोशो से सत्ता छीननी है।" उपन्यासकार ने वर्तमान युग के युवक वर्ग की मनावृति का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है।

(5) पथहीन (1957) / अलग-अलग आकृतियाँ

पथहीन ऐसे भ्रांत युवक की कहानी है जिसके पीछे न कोई सिद्धान्त है और न आदर्श समाज व्यवस्था। वह युवक पथहीन है जो स्वच्छेन्द यौन सम्बन्धों में ही जीवन को सार्थक मानता है। यौन विकृतियों के माध्यम से उपन्यास में सामाजिक यथार्थ का अंकन किया गया है।

(6) खम्मा अन्नदाता (1958)

यह उपन्यास एक पश्चाताप ग्रस्त राजा के जीवन के अंतिम दिनों में लिखी हुई आत्मकथा के रूप में प्रस्तुत किया गया है जिसमें राजाओं के अन्तः पुर में उनकी कामाग्नि में भस्म होने वाली निर्दोष नारियों की करूण कहानी और उन्हें राजाओं के चंगुल में फंसाने के लिए किये जाने वाले षड़यंत्रों का यथार्थ वर्णन है। इसमें राजस्थान के सामंती जीन की विलासिता एणं्व रनिवास की घुटन को व्यक्त किया गया है। उपन्यास का पात्र राजा दीपसिंह कहता है "राजा होना अपराध है। कितना झूठा जीवन व्यतीत करते है हम। प्रजा पर अत्याचार, झूठी आन बान के नारे, भोग विलास और घोर अशांति।" जोरावरसिंह को खेतीहर बेगारो ने साफ कहा "प्राण दे देंगे पर बेगार नही करेंगे।" सीना ठोक कर कहा गया यह कथन खेतीहर समाज में सामंती व्यवस्था के प्रति विद्रोहात्मक चेतना की झलक है। मानसिक के माध्यम से उपन्यासकार का अन्तस बोलता है "इन राठौड़ों और राजपूतों की जूती ही इनका कानूनी

है। इनकी अपनी इच्छा ही इनका असली धर्म है। दर असल ये कसाई से अधिक हृदयहीन और पत्थर से अधिक कठोर है।" यही यथार्थ बोध सामान्य जन में सामाजिक चेतना का संवाहक बनता है।

(7) ऑंचल में दूध ऑंखों में पानी (1958)

इस उपन्यास में लेखक ने नारी की पीडा का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। यह पीड़ा सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक एंव प्रणय की समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में अभिव्यक्त हुई है। इसमें नारी के पुनीत प्रेम की सार्थकता व उसकी स्वतन्त्रता के सत्य को खोजने की कोशिश की गई है और बताया गया है कि वह कितनी विवशता लिए हुए है। नारी अन्तर्गत से जुड़ा यह उपन्यास उसकी अन्तर्वेदना और अहम् के टकराव को तार्किक ढंग से प्रस्तुत करने में भी सफल रहा है। नमिता और ज्योतिर्मय के चरित्र असामान्य होते हुए भी सामाजिक चेतना जागृत करने की दृष्टि से प्रभावशाली है।

(8) प्यास के पंख (1958)

यह उपन्यास पुरूष की आकांक्षाओ से भरी मान्यताओं के बीच नारी के विविध मनागत संघर्षो को उभारता है। साथ ही उसके मन में पलने वाले विद्रोहपूर्ण हाहाकार को भी मार्मिक और विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है। इसमें अतृप्तियाँ और यौन कुंठाये अभिव्यक्त हुई है। शराबी पति के विरूद्ध पत्नी का कथन "तू सचमुच बाप नही कसाई है, अपने हाथों अपने बेटे के लिये कब्र खोद रहा है।" यह कथन नारी वर्ग की मनोवृति व उसकी चेतना को अभिव्यक्त करता है। इसी प्रकार और पर होने वाले शोषण को देखकर वीणा का अन्तस बोल उठता है "सचमुच और का जन्म ही बुरा है। भगवान किसी को औरत ना बनाए। सास का नखरा, ससुर का रोब, देवर का हठ, ननद की प्रतिस्पर्धा और पति के संकेत पर उठना-बेठना, छिः यह भी कोई जीवन है।"

(9) अनावृत (1959) / चूनर की पीड़ा

यह उपन्यास अनावृत शीर्षक से जनवरी (1959) व चूनर की पीड़ा शीर्षक से 1966 में प्रकाशित हुआ। उपन्यास में अर्थ लिप्सा, धर्म के नाप पर ढ़ोंग, कु प्रथाओं का जोर, मारवाड़ी समाज की जड स्थिति आदि का अंकन है, उन पर चोट की गई है। साहित्यकार अज्ञेय जी ने लिखा "हमारी सभ्यता हमारे आवृत करने का विराट प्रयास है, शरीर को वस्त्रों से, मन को मोह से, वेदना को अध्यात्म से, अशांति को विश्वास से। हम सभ्य तभी तक है जब तक इस आवरण को छिन्न न कर दें।" समाज में पल रहे अनाचार और टूटते सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्यों को अनावृत करना, विसंगति और विडम्बनाओं का चित्रण करना, कलकता व मुम्बई में रहने वाले धन कुबेरों के परिवार का बेदाग वस्त्र पहन कर भी दागदार होने का जानदार व शानदार चित्रण इस उपन्यास की विशेषता है। लेखक नारी व्यथा की पृष्ठभूमि पर सामाजिक चेतना व परिवर्तन को प्रतिबिम्बित करते है। लेखक इन्दर के माध्यम से धार्मिक विसंगतियों का पर्दाफाश करता है "धरम-अधरम कुछ नही, पाप-पुण्य एक दुकानदारी, मंदिर हम पण्डितों के भोजनालय और स्त्रियों के मिलने और गपशप करने के स्थान।"

(10) सपना (1959)

यह उपन्यास सत्य घटनाओं पर आधारित है। कल्पना का सम्बल कला को मुखरित करने के लिए लिया गया है। बंगाल की भावनामयी प्रणय भूमि पर आधारित इस उपन्यास में समाज के पीडित, व्यथित तथा निराश मानव की विषमताओं को उद्घाटित किया गया है। इस पूंजीवादी युग में असंतुष्ट मध्यम वर्गीय जीवन की तथा बदलते युग के मानदण्डों के साथ समन्वय न करने वाले संस्कारों एंव प्रवृतियों की मूल्य का प्रतीक इन्दिरा की आत्महत्या बनती है।

इसी शीर्षक से नया मनोवैज्ञानिक उपन्यास भी प्रकाशित हुआ है। इसमें अटूट मानवीय सम्बन्धों का दिग्दर्शन कराया गया है। प्रमुख नारी पात्रों में रजिया की माँ, नरोतम की भाभी, नरोताम की मंगेतर तारिणी, इंदिरा, तृप्ति, सुनन्दा आदि का चित्रण अर्थतंत्र की विषमता, नारी चरित्र की जटिलता, विचित्रता को व्यक्त कराता है।

(11) पथ के वंशी (1959) / आदमी बैसाबी पर

यह एक लघु उपन्यास है। इसमें आधुनिक सम्भ समाज के नवीन सम्बन्धों और बदलते हुए मानदण्डों का एक सीमित मर्यादा में चित्रण हुआ है। इसमें एक ऐसे कलाकार युवक की कहानी है जो लंगड़ा (विकलांग) है, हीन भावना से पीड़ित है, प्यार से उपेक्षित है। वह अपने लिए सुन्दर उपवन का निर्माण करता है परन्तु पूंजीवादी युग उसे चैन की सांस भी नही लेने देता। उसके जीवन की प्रत्येक सांस विषैली हो जाती है। उपन्यासकार ने अनाम के मध्यम से वर्तमान युग की विसंगतियों को प्रकट किया है "इनकी द्रोपदी विवशता और भय से अपने आपको उन पांच लोलुप भेडियों को सौंप दिया करती थी। ये भेडियें अपने भोग विलास की तृप्ति के साधन के रूप में उस अर्थ पीडित नारी का उपयोग करते थे। नारी तब तक मात्र भोग्या रूप में देखने की दृष्टि समाप्त होगी, समाज में यह चेतना कब पनपेगी?" लेखक की यह चिंता इस उपन्यास में रेखांकित होती है।

(12) खून का टीका (1959)

प्रस्तुत उपन्यास चितड़गढ़ के महान राणा हम्मीर के जीवन पर आधारित है। यह न केवल राजस्थान की गौरव गाथा का प्रतीक है अपितु इसमें लेखकीय मोलिकता भी परिलिक्षित होती है। चन्द्र ने लिखा "राणा हम्मीर के जीवन की घटनाए बडी विवादास्पद है। मैंने भरपूर सच्चाई के साथ उन घटनाओं को चित्रित करने का प्रयास किया है तथा इतिहास वेताओ के सत्य को ग्रहण करने की चेष्टा की है।" लेखक ने ऐतिहासिक घटनाक्रम के इस उपन्यास में तत्कालीन असहयोग आंदोलन को घुला-मिला कर सामाजिक चेतना को मुखरित किया हे। खिलजी द्वारा मेवाड को घेरना, लाखा द्वारा अपने पुत्रों की आहूति देना, अरि को महाराणा घोषित करना, वीरांगनाओं द्वारा जौहर कना, मालदेव को चितड़ सौपना, हम्मीर द्वारा चितड़ को पुनः प्राप्त करना जैसी अनेक घटनाए इसमें चित्रित हुई है।

(13) जग की रीत (1954)

यह एक कौटुंबिक समस्या उपन्यास है। इसका कथानक हमारे परिवार के पुराने बनते-बिगडते आधारों पर अवलम्बित है। एक और मनुष्य के मन की गाथा है तो दूसरी और भाग्य और भगवान के प्रति गहरी आस्था। इस उपन्यास को प्रतिपाद्य विषय यह है कि परिस्थिति के साथ-साथ मन बदलता है, आदमी बदलता है, किन्तु अतर्बाह्य विपुल संघर्ष के बीच जो अपने को सुखा स्थापित कर सके वही सत्य की व्याख्या बदल सकता है। उपन्यास में आधुनिक विचारों की युवती पार्वती वैधव्य जीवन के परम्परागत बंधनो को तोडकर पुनर्विवाह कर क्रांतिकारी उदाहरण प्रस्तुत करती है उसकी आत्मशक्ति का परिचय इस कथन में मिलता है "यदि भाग्य इतना कठोर है तो में उस भाग्य को ही खत्म कर दूंगी। यह पुरूष वर्ग से सामाजिक चेतना आह्वान करते हुए कहती है "मैं चाहती हूँ कि इस युग में आप स्त्रियों को थोडा मुक्त करे। केवल कायिक सम्बन्ध सर्वोपरि नही है।" यह संसार की रीति-नीति की सामाजिक व्याख्या करने वाला एक प्रगतिशील विचारों का उपन्यास है।

(14) धरती की पीर (1954)

यह एक लोक कथात्मक उपन्यास है। यह राजस्थान की प्रसिद्व लोक कथा 'राम चनणा, राजा रिसाल' पर आधारित है। लोक कथात्मक उपन्यासों के क्षैत्र में यह विशिष्ट प्रकार की कृति है उपन्यासकार ने प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से कई लोक कथाओ को एक साथ साहित्यिक मनोवैज्ञानिक और प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत कर एक क्रांति चेतना का कार्य है।

(15) नयना नीर भरे (1954) / विद्रोहिणी

यह एक सामाजिक उपन्यास है। इस उपन्यास में मानव की अर्थ लोलुपता का सजीव एंव मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है। उपन्यास के पात्र भंवर बाबू की दृष्टि में धन ही जीवन का अभिप्रेत है। धन के लिए वह नैतिक मूल्यों को भी तिलांजली दे देता है। अपनी पत्नी को अपने बॉस के पास भेज देता है। भंवर को येनकेन प्रकरण रूपया चाहिए। वह छाया से कहता है "आज वही आदमी है जिसके पास रूपया है। चाहे वह चोरी करे, तस्करी करे, रिश्वत खाए। बीबी को रंडी बनाकर पैसा कमाए।" छाया के कथन "अपनी आत्मा को बेचकर भी जीवित रहना मैं अच्छा नही समझती। उपेक्षा, घृणा, प्रताडना, उफ, जैसे नारी केवल सुगलने के लिए ही बनी हो। मैं अब किसी के बिना भी दुर्बल नही होऊँगी। मैने अपनी शक्ति पहचान ली है। मैं अकेली ही अपना रास्ता बनाऊंगी।" ये कथन नारी जागृति के, उसमें आ रही चेतना के परिचायक है।

(16) राहें अलग-अलग (1959)

यह सामाजिक उपन्यास है। यह महानगरीय जीवन और विघटित होते मूल्यों की रोचक गाथा है। उपन्यास के चरित्र आज के जीवन का सूक्ष्म रूप में विश्लेषण करते हे।

इस उपन्यास के माध्यम से महानगरीय चमकदार सभ्यता के नीचे अविश्वास, अनास्था को लेकर एक वीभत्स जीवन पनप रहा है तथा जहाँ हृदय और प्यार की भावनाओ के स्थान पर स्वार्थ लिप्सा की भावना प्रधान है, के खोखलेपन को दर्शाया है। यहाँ किसी वस्तु का मानदण्ड केवल प्रोफिट एण्ड लॉस है। इस दुनिया में किसी को कोई अधिकार नही कि वह किसी को दोषी ठहराए। पैसा कमाने की अंधी दौड में महानगर के मनुष्य को पूर्णतः यांत्रिक और संवेदनहीन बना दिया है। अर्थ और काम का कीडा बना यहां का व्यक्ति किसी के बारे कुछ नही जानता और जानकार भी अनजान बना रहता है। लगता है मानवीय संवेदनायें और सहानुभूति जैसे शब्द पूर्णतः समाप्त हो चुके है। सभी भागे जा रहे है, सभी दौड में शामिल है। "हम सब सिर्फ अपने दर्द का अहसास करते है। हम सब अपना सुख चाहते है। केवल अपना, नितान्त अपना।" उपन्यासकार ने व्यक्तिवादी चेताना को अस्वीकार कर सामाजिकता की भावपूर्ण चेतना का आग्रह किया है।

(17) प्रोफेसर (1959)

इस उपन्यास के माध्यम से चन्द्र ने प्रेम मूलक समस्याओं को बौद्धिक स्तर पर उठाकर उसका समाधान करने की चेष्टा की है। यह एक लघु उपन्यास है। इसमें समस्याओं को उठाने और उनका विश्लेषण करने से लम्बी-लम्बी वैचारिक व्याख्याए मिलती है।

(18) घूंघट के ऑसू (1960)

यह अनुपलब्ध है। इस उपन्यास का रचना फलक राजस्थानी परिवेश की सामाजिक एंव पारिवारिक घटनाओ से सम्बन्धित है।

(19) बडा आदमी (1961)

यह एक यथार्थवादी उपन्यास है। इस उपन्यास के माध्यम से अर्थ प्रधान सामाजिक व्यवस्था और उसके उजले आवरणो के बीच गंदे आचरणोंपर करारा प्रहार किया गया है। राजस्थान का वातावरण और पात्रों के माध्यम से उसे सम्पूर्ण व्यवस्था पर करारा व्यंग्य है जहां केवल पैसा ही चरम मूल्य है। मनुष्य का अहंकार पूर्ण जीवन धन बटोरने की मनोवृति, विश्वासघात, आन्तरिक झंझावृतों का मनोवैज्ञानिक चित्रण इस उपन्यास में हुआ है।

(20) गुनाहों की देवी (1961)

इस उपन्यास में एक राजस्थानी नारी गवरा के माध्यम से समाज की विषमता विसंगतियों और रूढ़ियों को व्यक्त किया गया है। लेखक ने उन पुरूषों के व्यंग्य चित्र प्रस्तुत किए है जो आदमी के वेश में पशु है। उपन्यास में वेश्या जीवन की चिरन्तन समस्या है जो विश्व व्यापी है। वस्तुतः वेश्या जीवन की समस्या का अभी तक कोई ऐसा समाधान नही निकल सका है जो इस कलंक को जडमूल से मिटा सके। वेश्यावृति का अड्डा चलाने वाली गवरा के लिए बेला नाम वेश्या दूसरी लड़कियों को एकत्र करके कहती है “यह मगरमच्छ है। हम सबको निगम जाएगीं। ओ छोटी-छोटी मछलियों चलो, इस मगरमच्छ को इकट्ठे होकर मारे।” चकलों का चित्रण भी मार्मिक है "रानी! यह इन्द्र अखाडा है। यह खूबसूरती का बाजार है। यहां लोग चांदी के सिक्के देकर हमारी जवानी खरीदते है। मर्यादा पुरूषोतम यहाँ नही आते।" इस उपन्यास में वेश्याओ का जीवन नरक के कीड़ों से भी बदतर बताया गया है “रण्डी बन जाने पर भी मुझे आराम नही, सुख नही, चैन नही।” लेखक ने इस दिशा में सामाजिक चेतना की आवश्यकता अनुभव की है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

[1] डॉ॰ कुंवरचन्द्र प्रकाश सिंह : हिन्दी नाट्य साहित्य और रंगमंच की मीमांसा, 1964।
[2] कृष्ण चन्द्र शर्मा : हरियाणा के कवि सूर्य लखमीचन्द, हरियाणा पब्लिकेशन, 1981।
[3] डॉ॰ कृष्ण चन्द्र शर्मा : लोककवि अहमद बख्श और उनकी रामायण सूर्यभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, 6।
[4] श्रीकृष्ण दास : लोकगीतों की सामाजिक व्यवस्था, साहित्य भवन लि॰ इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1956।
[5] डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय : लोकसाहित्य की भूमिका, साहित्य भवन, प्रा॰लि॰ इलाहाबाद, प्र॰सा॰, 1957।
[6] डॉ॰ कृष्णदेव शर्मा : भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र।
[7] डॉ॰ केशो राम शर्मा : गन्धर्व पुरुष लखमीचन्द, निर्मल प्रकाशन, दिल्ली, प्र॰सं॰ 2017 वि॰सं॰।
[8] के॰सी॰ यादव : हरियाणा प्रदेश का इतिहास, मनोहर पब्लिकेशन, अंसारी रोड़, दिल्ली, प्र॰सं॰ 1981।
[9] के॰सी॰ यादव, हरियाणा का इतिहास एवं संस्कृति, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, 1986।
[10] डॉ॰ गुणपाल सांगवान : हरियाणवी लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़, 1989।